|| श्रीहरिः ||

वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

॥ गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ॥

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 14: गुणत्रयविभागयोग

2/2 (श्लोक 14-27), रविवार, 01 जनवरी 2023

विवेचक: गीता विशारद श्री श्रीनिवास जी वर्णेकर

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/xrXL_ST7aDo

त्रिगुणात्मक प्रकृति

श्रीकृष्णजी की प्रार्थना, गुरु वंदना और दीप प्रज्वलन के उपरांत चतुर्दश अध्याय का प्रारंभ हुआ। चौदहवें अध्याय के प्रारंभ में ही श्रीभगवान ने कहा कि मैं उस परम उत्तम ज्ञान का पुन: वर्णन करूँगा जिसे जानकर मुनिगण सिद्धि प्राप्त करते हैं। भगवद्गीता में भगवान ने महत्वपूर्ण बातों को बार-बार बताया है। सत्त्व, रज एवं तमोगुण का वर्णन भगवान ने चौदहवें, सत्रहवें और अट्ठारहवें अध्यायों में किया है।

एकम् सद् विप्राः बहुधा वदन्ति एक ही सत्य को विद्वान, ज्ञानी अलग-अलग पद्धति से बताते हैं। प्रकृति के तीन गुणों से संसार कैसे चलता है इसका विस्तृत वर्णन इस अध्याय में किया गया है। समझना भी अलग अलग स्तर पर होता है। कोई बात समझ कर छोड़ दी। किसी बात को सुन कर, समझ कर आचरण में लाना ही महत्वपूर्ण है।

एक उदाहरण से समझते हैं। एक बच्चा टीवी देख रहा था माँ ने कहा दुकान से नमक लाओ। बच्चे ने सुन तो लिया लेकिन टीवी देखता रहा। फिर से कहा सुना नहीं नमक लाने को कहा था। बच्चा टीवी से उठकर दुकान गया अर्थात् नमक लाया, सुना, आचरण में लाया।

प्रकृति तीन गुणों से चलती है। ये तीनों गुण एक दूसरे पर हावी होने का प्रयास करते हैं। तीनों गुण महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हमें तीन गुणों के साथ रहना है। ये तीनों गुण कब प्रभावी होते हैं यह समझना होगा। भोजन में नमकीन, तीखे और मीठे में सामंजस्य बनाकर चलना महत्त्वपूर्ण है।

14.14

यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु, प्रलयं(म्) याति देहभृत्।
तदोत्तमविदां(म्) लोकान्, अमलान्प्रतिपद्यते॥14.14॥

जिस समय सत्त्वगुण बढ़ा हो, उस समय यदि देहधारी मनुष्य मर जाता है (तो वह) उत्तमवेत्ताओं के निर्मल लोकों में जाता है।

विवेचन — जिस समय सत्वगुण बढ़ता है यदि उस समय देहधारी मनुष्य मरता है तो वह निर्मल लोकों में जाता है। अन्तिम समय में अच्छे विचारों का चिंतन होता है तो अच्छे लोक की प्राप्ति होती है। सत्त्व गुण को अपना मानते हुए जिनके भाव, कर्म,

ज्ञान सब उत्तम हैं, उन पुण्यकर्मा लोगों का निर्मल लोकों पर अधिकार हो जाता है, उन्हीं निर्मल लोकों पर सत्त्वगुण में प्राण छोड़ने वाले का अधिकार हो जाता है। मृत्यु कब आएगी पता नहीं, किन्तु अधिक समय सत्वगुण में ही रहना चाहिए इससे सत्त्व गुण में मरने की संभावना बढ़ जाती है।

14.15

रजसि प्रलयं(ङ्) गत्वा, कर्मसङ्गिषु जायते।
तथा प्रलीनस्तमसि, मूढयोनिषु जायते॥14.15॥

रजोगुण के बढ़ने पर मरने वाला प्राणी कर्मसंगी मनुष्य योनि में जन्म लेता है तथा तमोगुण के बढ़ने पर मरने वाला मूढ़ योनियों में जन्म लेता है।

विवेचन— रजोगुण बढ़ा हो, मृत्यु आ जाए तो जहाँ कर्म करने का उत्साह हो वहाँ जन्म होता है। ऐहिक सुख भी प्राप्त करना चाहिए किन्तु उसमें रममाण नहीं होना चाहिए। रजोगुण में प्राणी मरता है तो मनुष्य योनि में जन्म लेता है और बहुत बड़े-बड़े कार्य करने वाले के साथ जन्म होता है।
तमोगुण में प्राणी मरता है तो मूढ़ योनि में जन्म धारण करता है। गुणों में मनुष्य को सात्विक गुण वाला होना चाहिए। जो तमस के अधीन होकर मरता है वह नरक और नीच योनि को प्राप्त होता है, उसका जन्म कीट, वृक्ष, लता के रूप में होता है। रजोगुण जन्म-मरण देने वाला है। कर्म करने का अधिकार मनुष्य योनि को ही है। जीवन भर अच्छे कर्म किये जायें, भाव अच्छे हो, लेकिन अन्तकाल में रजोगुण बढ़ने पर मनुष्य मरता है तो पुनः मनुष्य योनि में जन्म लेने पर उसके भाव और आचरण अच्छे होंगे।
श्रीमद्भागवत् में जड़ भरत की कथा है। जड़ भरत जी अत्यन्त ज्ञानी थे, उन्हें एक हिरण का बच्चा मिला वे उसका पालन पोषण करने लगे। वह पूर्णतया उसी में रम गये। अत: अगले जन्म में उन्हें हिरण का जन्म प्राप्त हुआ। जो चिन्तन हम करते हैं वही हमें प्राप्त होता है।

14.16

कर्मणः(स्) सुकृतस्याहुः(स्), सात्त्विकं(न्) निर्मलं(म्) फलम्।
रजसस्तु फलं(न्) दुःखम्, अज्ञानं(न्) तमसः(फ्) फलम्॥14.16॥

विवेकी पुरुषों ने – शुभ कर्म का तो सात्त्विक निर्मल फल कहा है, राजस कर्म का फल दुःख (कहा है और) तामस कर्म का फल अज्ञान (मूढ़ता) कहा है।

विवेचन—सुकृत का अर्थ है अच्छा कर्म, ऐसे कर्मों के कारण सत्वगुण बढ़ता है। सत्वगुण में वृद्धि होने पर पुण्य कर्म बढ़ते हैं। कुछ लोग कहते हैं कि पूजा करने से क्या होता है, पूजा क्यों करते हैं आदि। यह कर्म- काण्ड हमारे लिये हैं, पूजा करने से चित्त शुद्ध होता है। अच्छे कर्म या कार्य करेंगे तो निर्मलता बढ़ती है, चित्त शुद्ध हो जाता है। रजोगुण में सुख की प्राप्ति होती है। यह गुण मनुष्य को अधिक सुख प्राप्ति के लिये दौड़ाता है किन्तु इससे आगे जाकर दुःख प्राप्त होता है। तमोगुण में आलस्य, निद्रा, अज्ञान बढ़ता है। अज्ञान बढ़ने से तमोगुण बढ़ता है। ये तीनों ही गुण बंधन में बाँधते हैं।

14.17

सत्त्वात्सञ्जायते ज्ञानं(म्), रजसो लोभ एव च।
प्रमादमोहौ तमसो, भवतोऽज्ञानमेव च॥14.17॥

सत्त्वगुण से ज्ञान और रजोगुण से लोभ (आदि) ही उत्पन्न होते हैं; तमोगुण से प्रमाद, मोह एवं अज्ञान भी उत्पन्न होते हैं।

विवेचन—सत्वगुण से ज्ञान प्राप्त होता है और ज्ञान का प्रकाश दिखाई देता है। रजोगुण बढ़ने से लोभ बढ़ता है, लोभ बढ़ने से रजोगुण और अधिक बढ़ जाता है। तमोगुण में प्राणी से त्रुटियाँ होती हैं, मोह का निर्माण होता है, सोने पर और अधिक नींद

आती है। तमोगुण की अवस्था सभी को प्राप्त होती है, किन्तु तुरन्त ही चैतन्य होकर उठ जाने पर आलस्य दूर हो जाता है। गुणों पर विजय की इच्छा रखने वाले व्यक्ति ऐसी स्थिति को समझ कर छोड़ने का प्रयास करते हैं, किन्तु इसके उपरांत रजोगुण प्रभावी हो जाता है, यह भी कष्टकर है, रजोगुण बढ़ने से ज्ञान प्राप्ति की इच्छा हो जाती है, कब रुकना है इसका ज्ञान हो जाता है। रजोगुण दौड़ाता है। तमोगुण से प्रमाद, मोह, आलस्य निद्रा आती है। सतोगुण से ज्ञान प्राप्त होता है, मन शांत रहता है, यह दिशा दिखाता है। तमोगुण में शांति और सम्पन्नता नहीं मिलती है। यह अवस्था प्रत्येक व्यक्ति की होती है। तीनों गुणों से प्रकृति चलती है। जीवन में सत्वगुण को लाना चाहिए।

14.18

ऊर्ध्वं(ङ्) गच्छन्ति सत्त्वस्था, मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः।
जघन्यगुणवृत्तिस्था, अधो गच्छन्ति तामसाः॥14.18॥

सत्त्वगुण में स्थित मनुष्य ऊर्ध्वलोकों में जाते हैं, रजोगुण में स्थित मनुष्य मृत्युलोक में जन्म लेते हैं (और) निन्दनीय तमोगुण की वृत्ति में स्थित तामस मनुष्य अधोगति में जाते हैं।

विवेचन — भगवान कहते हैं सत्वगुण वाले प्राणी का मन निर्मल होता है और ऊपर की ओर प्रगति करते हैं, सत्त्व गुण में रहते हैं। रजोगुण में प्राणी दौड़ते रहते हैं, दौड़ना कभी समाप्त नहीं होता है। इच्छायें समाप्त नहीं होतीं। रजोगुणी इस संसार में ही दौड़ते रहते हैं। तमोगुण के कारण निद्रा, आलस्य, मोह बढ़ता है, कुछ करने का मन नहीं करता, उठने का मन नहीं करता, कार्य में भी मन नहीं लगता है। तमोगुण में प्राणी नीचे नरक की ओर जाता है। जैसे सप्तलोक ऊपर बताए गए हैं वैसे ही सप्तलोक नीचे भी हैं।

भू, भुवः, स्वः, महा, जनः, तपः, सत्यम् - ये सात लोक ऊपर है एवं सात लोक नीचे भी हैं। तमोगुणी नीचे से नीचे गिरकर अन्त में पत्थर की भाँति पड़कर शान्त हो जाते हैं। किस दिशा में जाना है, यह हमें स्वयं ही सोचना है। श्रीभगवान कहते हैं कि अपनी उन्नति या अधोगति के विषय में स्वयं ही चिन्तन करना है। छठे अध्याय में भगवान ने कहा है कि अपना उद्धार स्वयं करना है। भगवद्गीता भी मार्ग दिखाती है, गुरु भी मार्ग दिखाते हैं, चलना जीव को है। पहले स्वयं के अन्दर आकलन करना है। दूसरों के गुणों का पता चलता है, स्वयं का भी आकलन करना चाहिए। अन्त में भगवान कहते हैं कि तीन गुणों के कारण सब कार्य होते हैं।

14.19

नान्यं(ङ्) गुणेभ्यः(ख्) कर्तारं(म्), यदा द्रष्टानुपश्यति।
गुणेभ्यश्च परं(म्) वेत्ति, मद्भावं(म्) सोऽधिगच्छति॥14.19॥

जब विवेकी (विचार कुशल) मनुष्य तीनों गुणों के (सिवाय) अन्य किसी को कर्ता नहीं देखता और (अपने को) गुणों से पर अनुभव करता है, (तब) वह मेरे सत्स्वरूप को प्राप्त हो जाता है।

विवेचन— द्रष्टा का अर्थ है स्वयं की ओर देखना, इससे यह समझ में आ जाता है, तीनों गुणों के कारण सब कार्य हो रहे हैं। सत्कर्म करते हुये ही सत्व गुण बढ़ा। आलस्य निद्रा तमोगुण के कारण आई। मैं क्या कर रहा हूँ, तीनों गुण का आकलन अपने अन्दर भी करना चाहिए। मैं किस प्रकार के कार्य कर रहा हूँ। अपना द्रष्टा स्वयं बनना चाहिए। गुणों से कैसे छूटना है। प्रत्येक जीव तीनों गुणों के आधार पर काम करता है। यह देखना है कि शरीर में कौन सा गुण बढ़ रहा है। लोगों को नहीं देखना है, स्वयं को देखना है। जो यह जानता है वह मेरे भाव को प्राप्त कर लेता है। वो सच्चिदानंद के स्वरुप को प्राप्त होता है, अत: स्वयं को देखना सीखना चाहिए।

ज्ञानेश्वर महाराज जी कहते हैं - ब्रह्मा जी ने इस सृष्टि का निर्माण किया जिससे ये तीन गुण प्रकट हुए, देह में ही नहीं मन में विचार भी त्रिगुणात्मक हैं।,शरीर और अन्तःकरण में हम अटक जाते हैं।

ज्ञानेश्वर महाराज जी कहते हैं कि दूध का दही बनता है, गन्ने के रूप में मिठास प्रकट होता है।

तीनों गुण ही बंधन के कारण है। जीव बंधन में होते हुए भी मुक्त हो सकता है। यह तभी सम्भव है जब वह स्वयं की ओर देखे और ध्यान दें। जीव शरीर में रहते हुए मोक्ष का आनंद ले सकता है। आत्म-तत्व और शरीर दोनों अलग अलग है। जैसे नाटक चलता है तो नाटक करने वाले को पता होता है कि मैं कौन हूँ? मैं तो रोल कर रहा हूँ, तीनों गुणों में उलझा हूँ। जब यह देखना आ जाता है कि मैं शरीर नहीं हूँ, मैं कर्ता नहीं हूँ, तीन गुणों के कारण कार्य हो रहा है, मैं तीनों गुणों के परे हूँ। मैं इनका साक्षी हूँ।

14.20

गुणानेतानतीत्य त्रीन्, देही देहसमुद्भवान्।
जन्ममृत्युजरादुःखैः(र्), विमुक्तोऽमृतमश्नुते॥14.20॥

देहधारी (विवेकी मनुष्य) देह को उत्पन्न करने वाले इन तीनों गुणों का अतिक्रमण करके जन्म, मृत्यु और वृद्धावस्था रूप दुःखों से रहित हुआ अमरता का अनुभव करता है।

विवेचन — भगवान जी ने कहा तीन गुणों को पार करके देह में रहने वाला स्वरुप देह के कारण निर्मित हुआ है। जब वो अमरत्व को प्राप्त होता है तो मृत्यु नहीं होती है शरीर की मृत्यु होती है। जब वह मानता है कि मैं शरीर हूँ तो भय और अमरता की इच्छा पैदा हो जाती है। जब वह विवेक को महत्त्व देता है तो यह ज्ञान होने लगता है कि मैं शरीर नहीं हूँ तब उसका भय समाप्त हो जाता है। शरीर निरंतर अमरता में रहता है, तब उसे स्वयं ही अमरता का अनुभव होता है। साधकों को चाहिए कि वे जन्म-मृत्यु वृद्धावस्था, शरीर के विकारों को प्रमुखता न देकर अपने चिंतन को प्रमुखता दें। प्रकृति तीन गुणों से चलती है।

एक शुक नलिका न्याय है - एक शुक को नलिका पर बैठा दिया जाता है तो नलिका हिलती है और शुक उसे और ज़ोर से पकड़ता है, वह और ज़ोर से हिलती है। शुक अत्यन्त भयभीत हो जाता है जबकि वह उस नलिका से उड़कर जा सकता है। हमारी यही अवस्था है, हम इस शरीर को पकड़ कर रखते है। जो तीन गुणों के बन्धन से छूट जाता है वह आत्म स्वरूप को समझ लेता है और इस बन्धन से मुक्त हो जाता है। तीनों गुणों का आकलन करते हुए वह गुणों के साथ रहते हुए उनका आनन्द लेते हुए जीवन का आनन्द लेता है।

आदिगुरु शंकराचार्य जी ने कहा—

मनो बुद्धि अहंकार चित्तानि नाहं
न च श्रोत्र जिव्हे न च घ्राण नेत्रे
न च व्योम भूमि न तेजो न वायुः
चिदानन्द रूपः शिवोऽहम शिवोऽहम

14.21

अर्जुन उवाच
कैर्लिंगैस्त्रीन्गुणानेतान्, अतीतो भवति प्रभो।
किमाचारः(ख्) कथं(ञ्) चैतांस्, त्रीन्गुणानतिवर्तते॥14.21॥

अर्जुन बोले – हे प्रभो! इन तीनों गुणों से अतीत हुआ मनुष्य किन लक्षणों से (युक्त) होता है? उसके आचरण कैसे होते हैं? और इन तीनों गुणों का अतिक्रमण कैसे किया जा सकता है?

विवेचन—अर्जुन ने श्रीभगवान से पूछा कि भगवान इन तीन गुणों से अतीत मनुष्य किन लक्षणों से युक्त होता है? क्या लक्षण

बताए गए हैं? उसका आचरण कैसा होता है? कैसे तीन गुणों को पार कर जाता है? यह अवस्था कैसे प्राप्त होती है? तीनों गुणों का अतिक्रमण कैसे किया जाता है? भगवान को इन प्रश्नों से आनन्द प्राप्त होता है और वे अर्जुन को उत्तर देते हैं

14.22

श्रीभगवानुवाच
प्रकाशं(ञ्) च प्रवृत्तिं(ञ्) च, मोहमेव च पाण्डव।
न द्वेष्टि सम्प्रवृत्तानि, न निवृत्तानि काङ्क्षति॥14.22॥

श्री भगवान बोले – हे पाण्डव! प्रकाश और प्रवृति तथा मोह – (ये सभी) अच्छी तरह से प्रवृत्त हो जायँ तो भी (गुणातीत मनुष्य) इनसे द्वेष नहीं करता और (ये सभी) निवृत्त हो जायँ तो (इनकी) इच्छा नहीं करता।

विवेचन—श्रीभगवान ने अर्जुन से कहा कि प्रकाश बढ़ता है, ज्ञान प्रकट होता है और विवेक जागृत होता है, कर्म करने की इच्छा बढ़ती है, मोह होता है, देखना सीखता है, उससे द्वेष नहीं करता है। सत्वगुण, रजगुण और तमोगुण का द्वेष नहीं करता है। उनको देखना सीखता है फिर द्वेष नहीं करता है द्दष्टा बनना है। वृत्तियाँ एक समान किसी की भी नहीं रहती हैं। तीनों गुणों की वृत्तियाँ तो गुणातीत महापुरुष के अन्तःकरण में होती हैं। उसका वृत्तियों से राग-द्वेष नहीं होता है। गुणातीत व्यक्ति की द्दष्टि उधर जाती नहीं क्योंकि उसकी द्दष्टि में परमात्मा के सिवाय और कुछ नहीं रहता है। गुणातीत महापुरुष में अनुकूलता बनी रहे, प्रतिकूलता मिट जाय ऐसी इच्छा नहीं होती।

अनुभव होने पर अनुकूलता और प्रतिकूलता का ज्ञान होता है। गुणातीत महापुरुष आदर्श होता है। हमारा सम्बन्ध तो परमात्मा के साथ है वृत्तियाँ बदलती रहती है, वह परिवर्तन से विचलित नहीं होता है।

14.23

उदासीनवदासीनो, गुणैर्यो न विचाल्यते।
गुणा वर्तन्त इत्येव, योऽवतिष्ठति नेङ्गते॥14.23॥

जो उदासीन की तरह स्थित है (और) (जो) गुणों के द्वारा विचलित नहीं किया जा सकता (तथा) गुण ही (गुणों में) बरत रहे हैं – इस भाव से जो (अपने स्वरूप में ही) स्थित रहता है (और स्वयं कोई भी) चेष्टा नहीं करता।

विवेचन—सबसे पहले ऊपर बैठा व्यक्ति नीचे की बातों को ध्यान से देखता है। शरीर द्वारा कैसा कार्य हो रहा है। हम देख रहे हैं कौन सा गुण बढ़ रहा है। वह गुणों के घटने-बढ़ने पर विचलित नहीं होता है। गुण अपना काम कर रहे हैं यह समझ कर वह विचलित नहीं होता। गुण से अतीत हूँ यह जानते हुए वह गुणों के परिवर्तन से विचलित नहीं होता है। स्थित रहता है, सम भाव में रहता है और साक्षी भाव से देखता है। गुणातीत महापुरुष, आदर्श व्यक्ति का लक्षण है कि वह मन, चित्त, बुद्धि के द्वारा हो रही क्रिया में विवेक को नहीं भूलता है, स्वयं को भी नहीं भूलता।

14.24

समदुःखसुखः(स्) स्वस्थः(स्), समलोष्टाश्मकाञ्चनः।
तुल्यप्रियाप्रियो धीरः(स्), तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः॥14.24॥

जो धीर मनुष्य सुख-दुःख में सम (तथा) अपने स्वरूप में स्थित रहता है; जो मिट्टी के ढेले, पत्थर और सोने में सम रहता है, जो प्रिय-अप्रिय में सम रहता है। जो अपनी निन्दा-स्तुति में सम रहता है; जो मान-अपमान में सम रहता है; जो मित्र-शत्रु के पक्ष में सम रहता है (और) जो सम्पूर्ण कर्मों के आरम्भ का त्यागी है, वह मनुष्य गुणातीत कहा जाता है। (14.24-14.25)

विवेचन — सुख दुःख में सम और स्थिर रहता है। मिट्टी के ढेले और सोने की प्राप्ति में वह सम रहता है। अनुकूलता सुख हैं.

प्रतिकूलता दुःख है। सुख और दुःख आते जाते रहते हैं, वह अपने स्वरूप में स्थित है, कुछ भी स्थाई नहीं है परिवर्तन होते रहते हैं। जो अपने स्वरुप का अनुभव करता है वह स्वस्थ है। कभी फूल आयें, कभी कांटे आयें सब में समभाव में रहता है। समदृष्टि होनी चाहिए। वह आत्म निन्दा और स्तुति से विचलित नहीं होता, वह भगवान का कार्य समझ कर काम करता है। मान, पद और प्रतिष्ठा में नहीं फँसता है। वह अपनी स्थिति का स्वयं दर्शन करता है।

14.25

मानापमानयोस्तुल्य:(स्), तुल्यो मित्रारिपक्षयोः।
सर्वारम्भपरित्यागी, गुणातीतः(स्) स उच्यते॥14.25॥

विवेचन — जो मनुष्य सुख दुःख में समभाव में रहता है, अपने स्वरुप में स्थित रहता है, वह मिट्टी के ढेले तथा पत्थर और सोने में सम रहता है, जो प्रिय-अप्रिय में समभाव रखता है जो निन्दा, मान-अपमान, मित्र-शत्रु के पक्ष में समभाव रखता है वह मनुष्य गुणातीत महापुरुष कहलाता है।

यहाँ भगवान ने ये आठ परस्पर विरोधी नाम बताए हैं सुख और दुःख, प्रिय और अप्रिय, निन्दा और स्तुति, मान और अपमान जिसे सब में समान भाव हो जाता है, वह गुणातीत महापुरुष सम रहता है। रावण की मृत्यु के उपरांत भगवान श्रीराम ने विभीषण से कहा कि अपने भाई का अन्तिम संस्कार करो, विभीषण ने कहा कि वह मेरा भाई नहीं है, भगवान ने कहा कि तुम मेरा भाई समझ कर कार्य करो। मरने के पश्चात कैसी शत्रुता। जो कर्म के कर्त्तव्य का श्रेय स्वयं नहीं लेता है वह गुणातीत है।

14.26

मां(ञ्) च योऽव्यभिचारेण, भक्तियोगेन सेवते।
स गुणान्समतीत्यैतान्, ब्रह्मभूयाय कल्पते॥14.26॥

और जो मनुष्य अव्यभिचारी भक्तियोग के द्वारा मेरा सेवन करता है, वह इन गुणों का अतिक्रमण करके ब्रह्म प्राप्ति का पात्र हो जाता है।

विवेचन— जो मनुष्य अव्यभिचारिणी भक्ति योग के द्वारा मेरा चिंतन या सेवन करता है, इन तीनों गुणों का अतिक्रमण का पात्र हो जाता है। भक्तियोग से साधक जो भी चाहता है, उसी की प्राप्ति हो जाती है। जो मनुष्य ब्रह्म की प्राप्ति और मुक्ति तत्वज्ञान चाहता है उसे भक्ति से ब्रह्म की प्राप्ति होती है। ब्रह्म भगवान का ही स्वरूप है। तेरहवें श्लोक में भक्ति को ज्ञान प्राप्ति का साधन बताया गया है।

भक्त तीनों गुणों से अतीत हो जाता है। सगुण भगवान भी गुणों पर आश्रित नहीं है। जो तीनों गुणों के वश में है उसका नाम सगुण नहीं है। भगवान की ओर भक्ति योग से स्वतः ही सुगमता से गुणातीत हो जाता है। भगवान के समग्र रूप का ज्ञान हो जाता है और प्रेम भी प्राप्त होता है।

14.27

ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहम्, अमृतस्याव्ययस्य च।
शाश्वतस्य च धर्मस्य, सुखस्यैकान्तिकस्य च॥14.27॥

क्योंकि ब्रह्म का और अविनाशी अमृत का तथा शाश्वत धर्म का और ऐकान्तिक सुख का आश्रय मैं (ही हूँ)।

विवेचन - श्रीकृष्ण जी कहते है ब्रह्म और अविनाशी अमृत का तथा शाश्वत धर्म का, सुख का आश्रय मैं ही हूं। ब्रह्म और अविनाशी अमृत का आश्रय मैं हूँ। यह निर्गुण निराकार है। ज्ञान योग की बात है। शाश्वत धर्म का आश्रय मैं हूँ। परमात्मा सब का कल्याण करते हैं। परमात्मा अव्यक्त है। कल्याण हेतु कार्य करना सारी बातें परमात्मा में दिखाई देती है। वह व्यक्ति योगी हैं जो

भगवान का चिंतन करते हुए कार्य करता है। साक्षी भाव रख निर्मल चित्त से प्रेमपूर्वक कार्य करते रहना चाहिए। भगवान साक्षी हैं।

प्रश्नकर्ता - कुसुम जी

प्रश्न -कैसे पता चलेगा पूजा सही है कि ग़लत?

उत्तर -पूजा करते समय भगवानजी में मन, चित्त और बुद्धि लगी है और कोई विचार मन में नहीं आना चाहिए तो पूजा सही है। विचार गलत आ रहे हैं, पूजा में मन नहीं लगता है। भगवान की भक्ति और पूजा प्रेमपूर्वक और श्रद्धा से करनी चाहिए।

प्रश्नकर्ता - कुसुम जी

प्रश्न - अंदर से कैसे देखें? अपने आप को कैसे देखें?

उत्तर- प्रकृति तीन गुणों से बनी है। हमें देखना है कि कौन सा गुण हमारे शरीर में काम कर रहा हैं शरीर के द्वारा कैसे काम हो रहे हैं, कौन से विचार आ रहे हैं - विचार सही है या ग़लत। मन, बुद्धि और चित्त से कार्य करना चाहिए।

प्रश्नकर्ता - प्रीति जी

प्रश्न - कर्म अच्छे किए हैं, जीवन में मृत्यु के समय अंतिम विचार गलत आया तो क्या होगा?

उत्तर -अच्छे कर्म कार्य व्यर्थ नहीं जाते। हमें अपने कर्म के अनुसार फल प्राप्त होता है। अंतिम समय में यदि विचार गलत आया तो थोड़े समय के लिए उसका भुगतान करना पड़ता है। अच्छे कर्म कभी नष्ट नहीं होते हैं।

ॐ श्री कृष्णार्पणमस्तु।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासु उपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां(म्) योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे गुणत्रयविभागयोगो नाम चतुर्दशोऽध्याय:।।

इस प्रकार ॐ तत् सत् - इन भगवन्नामों के उच्चारणपूर्वक ब्रह्मविद्या और योगशास्त्रमय श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप श्रीकृष्णार्जुनसंवाद में 'गुणत्रयविभागयोग' नामक चौदहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!

हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा

संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !

संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!

आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||

||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||